6.4

संस्कृत साहित्य में आदर्श नेता के गुण

डॉ० रामहेत गौतम

सहायक प्राध्यापक संस्कृत, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म०प्र०)

मानव के सम्यक् विकास में सुमन और बुद्धि की भूमिका के समान समाज और राष्ट्र निर्माण में एक अच्छे नेता का होना आवश्यक है। मन की विकृति शरीर के विनाश और सुकृति सुखसृष्टि का कारण बनती है।

कायिक, वाचिक, मानसिक कर्म तथा कर्म जनित सुख-दुःख की अनुभूति मन का अनुगमन करते हैं। मन समस्त इन्द्रियों का नेतृत्व करता है। नेता मन के दूषित हो जाने पर शेष समस्त इन्द्रियाँ भी दुष्टता में प्रवृत्त हो जाती हैं और दुःख मानव का उसी प्रकार पीछा नहीं छोड़ता जिस प्रकार गाड़ी का पहिया बैल के पैरों का पीछा नहीं छोड़ता। इसके विपरीत मन के स्वस्थ तथा स्वच्छ होने पर सुख परछायी की भाँति मानव के साथ चलता है।

मनो पुब्बंगमा धम्मा, मनोसेट्ठा मनोमया।
मनसा चे पदुट्ठेन भासति वा करोति वा,
ततो नं दुक्खमन्वेति चक्कं व वहते पदं।।[1]
मनो पुब्बंगमा धम्मा, मनोसेट्ठा मनोमया।
मनसा चे पसन्नेन भासति वा करोति वा,
ततो नं सुखमन्वेति छाया व अनपायिनि।।[2]

अतः वैदिक ऋषि मन के कल्याणकारी होने की कामना करते हुए कहते हैं कि-

1. धम्मपद 1/1
2. धम्मपद 1/2

Scanned by CamScanner

यज्जागृतो दूरमुदैति देवं तदुसुप्तस्य तथैवेति।
दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।[1]

जागृत रहने पर जो (मेरा मन) विविध प्रकार के विचारों में दूर-दूर तक गमन करता है, सो जाने पर भी स्थिर नहीं रहता बल्कि उसी प्रकार दूर-दूर तक और स्वप्न में भी भटकता रहता है। हे दयामय! समस्त ज्ञानेन्द्रियों का प्रकाशक एवं दूरगामी मेरा मन लोककल्याणकारी विचारों वाला हो।

शरीर के स्वास्थ्य और विकास के लिए सुमन की भाँति समाज एवं राष्ट्र के विकास के लिए एक कुशल एवं आदर्श नेता की आवश्यकता होती है।

नेता के गुण, विचारधारा और आचरण से समाज और राष्ट्र के स्वरूप का निर्माण होता है। लोग नेता के व्यवहार से प्रेरित होकर स्वेच्छा से सद्कार्य में प्रवृत्त होते हैं।

नेता कुशल नेतृत्व से समाज व राष्ट्र में ऊर्जा तथा गतिशीलता पैदा कर उद्देश्य के प्रति प्रोत्साहित व प्रेरित करता है। इससे समाज की दशा व दिशा दोनों निर्धारित होती हैं। नेतृत्व कर्ता का यही कार्य गतिशील नेतृत्व है। व्यक्तिगत, सामाजिक, राष्ट्रिय जीवन क्षेत्र में अनेक समस्यापूर्ण चुनौतियाँ हैं। समाज तथा राष्ट्रहित के लिए जो व्यक्ति जो इन समस्याओं के निदान के लिए आगे आता है तथा तन व धन से नेतृत्व करता है। जैसे -

यो जात एव प्रथमो मनस्वान्, देवो देवान्क्रतुना पर्यभूषत्।
यस्य शुष्माद्रोदसी अभ्यसेतां नृम्णस्य मह्ना स जनास इन्द्रः।।[2]

अर्थात् वैदिक ऋषि गृत्समद लोगों को इन्द्र के सम्बन्ध में बताते हुए कहते हैं कि जिसने पैदा होते ही यज्ञ कर्म से देवताओं का अतिक्रमण किया तथा जिसके सैन्यशक्ति बल से सम्पूर्ण पृथिवी काँपती है, वही इन्द्र है।

श्रीमद्भगवद्गीता में श्री कृष्ण भी लोक हित के लिए नेतृत्व करने की बात करते हैं-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत!।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।[3]

1. शुक्ल यजुर्वेद 1.6
2. ऋग्वेद 2-12
3. भगवद्गीता 4/7

Scanned by CamScanner

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।[1]

अम्बेडकर भी समाज को जातिभेद के दंश से मुक्ति दिलाने के लिए सामाजिक नेतृत्व की प्रतिज्ञा करते हुए कहते हैं –

धीरः स्म प्रतिजानीते सेवितुं दलिजाञ्जनान्।[2]
कर्तुमान्दोलनं स्वस्य लोकस्योन्नतिकाम्यया।
करोति स्म व्रतं धीरः स्वजीवनसमर्पणात्।।[3]

अपने लोगों की उन्नति की इच्छा से आन्दोलन करने के लिए उस बुद्धिमान ने अपना जीवन समर्पण करने का व्रत किया और बहिष्कृतों के हित के लिए सभा की स्थापना कर कुशल न्यायविद बने। जो भी सहायता मांगने आया उसको निराश नहीं किया।

बहिष्कृतहितां तत्र सभां संस्थाप्य यत्नवान्।
स न्यायकुशलो लेभे न्यायाधीशप्रसन्नताम्।।[4]

चक्रवान् स हि सर्वस्य सेवां निजबलान्वयाम्।
निराशो नाभवत् कोऽपि दीनस्तस्य पुरः स्थितः।।[5]

भारत भूमि के मनीषियों ने लोक कल्याण के लिए ही ज्ञान की खोज की और समस्त जीवों का हित साधने में प्रवृत्त हुए।

जगद्धिताय बुद्धो हि बोधमाप्नोति शाश्वतम्।
अतैव च जीवानां सर्वेषां तु हिते रतः।।[6]

उनका सम्पूर्ण जीवनवृत्त और उनके उपदेशों की प्रासंगिकता सदा बनी रहने वाली है। अतः उनके उपदेशों को जन सामान्य तक पहुँचाने के लिए साहित्यकारों ने काव्य को माध्यम चुना।

---

1. भगवद्गीता 4/8
2. भीमाम्बेडकरशतकम् 76
3. भीमाम्बेडकरशतकम् –77
4. भीमाम्बेडकरशतकम् –90
5. भीमाम्बेडकरशतकम्–97
6. बुद्धचरित 15/28

Scanned by CamScanner

बुद्धानुरागादनुगम्य तस्य शास्त्रं च लोकस्य हिताय शान्त्यै।
काव्यं कृतं ज्ञापयितुं निजस्य कला न काव्यस्य च कोविदत्वम्।।[1]

संस्कृत साहित्य में प्रत्येक व्यक्ति को लोक कल्याण के माध्यम से स्वकल्याण करने का मार्ग दिखाया है। मानव समाज का अधिक से अधिक कल्याण कोई कर सकता है तो वह समाज का नेतृत्वकर्ता है। वह ही दया और दण्ड के समुचित प्रयोग से समाज का अनुशासित विकास करता है। संस्कृत साहित्य में नेतृत्वधर्म अर्थात् राजधर्म को प्रमुख्यता से वर्णित किया गया है। नेता अर्थात् राजा के कर्त्तव्य और उससे सम्बंध रखने बाले नियम व विधि उसके नेतृत्व की दिशा और दशा निर्धारित करते हैं। नेता अथवा राजा से कुशल तथा गतिशील नेतृत्व की कामना की जाती है कि–

इहैवैधि मापच्योष्ठाः पर्वत इवाविचाचलत्।
इन्द्रेहैव ध्रुवस्तिष्ठेहि राष्ट्रमुधारय।।[2]

अर्थात् हे राष्ट्राध्यक्ष! आप इसी पद पर रहते हुए उन्नति कीजिए। पर्वत के समान स्थिर रहिए और अपने कार्य में शिथिलता मत आने दीजिए। जैसे परमैश्वर्यशाली परमात्मा सम्पूर्ण विश्व का शासक स्थिर होकर शासन करता है। ऐसे ही आप भी इस राष्ट्र का प्रशासन चलाइए।

एक सर्वश्रेष्ठ नेता/राजा वही है जो अपने नैतिक मूल्यों पर दृढ़ रहते हुए अपने दायित्वों के प्रति सजग रहता है। अच्छे शासक की प्रजा सभ्य व राष्ट्रप्रेमी होती है। प्रजा राजा का अनुगमन करती है। अतः शास्त्र सदा ही नेताओं को उनके दायित्वों अर्थात राजधर्म का बोध कराते रहे हैं। संस्कृत साहित्य में नेता के धर्म का एक आदर्श रूप प्राप्त होता है। वर्तमान में व्यक्तित्वहीन होते प्रशासकों, नेताओं जनसामान्य को इन आदर्शों से अवगत कराने के लिए संस्कृत साहित्य में एक आदर्श नेता के गुण इस प्रकार हैं–

आदर्श व्यक्तित्व– प्रशासक का व्यक्तित्व ही प्रजा के लिए सटीक सांकेतिक उपदेश व आदेश हुआ करता है। इसलिए प्रशासक का व्यक्तित्व उत्कृष्ट कोटि का होना जरूरी है। प्रशासक का व्यक्तित्व शारीरिक और व्यावहारिक दो प्रकार का होता है।

1. बुद्धचरित 28/78
2. अथर्ववेद 6/87/2

शारीरिक व्यक्तित्व– आदर्श नेता का शरीर स्वस्थ, दृष्टि और शक्ति बृषभ की भाँति गम्भीर और अपरिमित होती हैं।[1] वाणी अकारण क्रोध व कठोरता रहित होती है।[2] शक्तिशाली हो।[3] वैभवशाली हो।[4]

व्यावहारिक व्यक्तित्व – नेता का व्यावहारिक व्यक्तित्व लोकहितकारी सद्‌गुण सम्पन्न हो। क्योंकि कोई भी नेता पराक्रम, सम्पत्ति या नीति से उस पद को नहीं पा सकता जिसे श्रम और व्यय के विना ही वह सद्‌गुणों के मार्ग पर चलकर प्राप्त करता है।[5] जैसे गुण परिपूर्ण वृक्ष समय आने पर पका हुआ फल प्रदान करता है। वैसे ही नेता से न्यायपूर्वक रक्षित देश उसे धर्म, अर्थ और सुख से सम्पन्न करता है।[6]

धर्म का पालन – अत: नेता धर्मपूर्वक पृथ्वी पर शासन करे– प्रशगधि धर्मेण वसुन्धरामत: करोतु।[7] सद्धर्म का अनुकरण ही राजा की प्रशासनिक कुशलता का मानदण्ड है और उसकी दया,दण्ड व करनीति का प्रेरक तत्त्व भी धर्म ही है। अत: राजा अपनी प्रजा और अन्य राजाओं को यदि अपने अधीन करना चाहता है तो इसका उपाय भी पराक्रम, सम्पत्ति धर्माचरण ही है। जब नेता स्वयं सद्धर्म का दृढ़ता से अनुकरण करता है तो उसके मन्त्री, लोकपाल आदि उसके सद्‌गुणों के प्रति अनुरक्त होकर अपनी कुशलता से प्रजा को सदाचारी बनाने में उसकी सहायता करते हैं। अत: महात्मा, राजा, मन्त्री, लोकपाल, प्रजा आदि सभी की अच्छाई का मानदण्ड धर्म ही है। महाकवि शूद्रक कृत मृच्छकटिकम् प्रकरण में शकार– प्रवहणमधिरुह्य गच्छामि। येन दूरतो मां प्रेक्ष्य भविष्यन्ति एष स राष्ट्रियश्यालो भट्टारको गच्छति।[8]

एताभ्यां ते दशनखोत्पलमण्डलाभ्यां
हस्ताभ्यां चाटुशतताडनलम्पटाभ्याम्।
कर्षामि ते वरतनुं निजयानकात्
केशेषु बालिदपितामिव यथा जटायुः।।[9]

---

1. जातकमाला–मैत्रीजातकम्–11
2. जातकमाला–मैत्रीजातकम्–14
3. जातकमाला–उन्मादयन्तीजातकम्–40
4. जातकमाला–सुतसोमजातकम्–29
5. जातकमाला–हंसजातकम्–98
6. जातकमाला–महाबोधिजातकम्–71
7. जातकमाला–हंसजातकम्–99
8. जातकमाला–विश्वन्तरजातकम्–10
9. जातकमाला–विश्वन्तरजातकम्–18

Scanned by CamScanner

शिथिल प्रशासकों के परिजनों में अत्याचार की प्रवृत्ति बढ़ने का भय बना रहता है। जबलपुर इन्दौर रेल में छेड़छाड़ के जीवन्त उदाहरण है।

नीति व धर्म में सामन्जस्य विधायकता– राजनीति धर्म के मार्ग का अनुसरण वहीं तक करती है जहाँ तक राष्ट्र के आर्थिक विकास में धर्म बाधक नहीं बनता है। नेतृत्वकर्ता के लिए नीति प्रधान होती है धर्म नहीं क्योंकि धर्म को प्रधानता देने वाले का स्थान तपोवन होता है राजप्रासाद नहीं–

सिंहासनं तेजसि लब्धशब्दास्त्रि वर्ग सेवानिपुण भजन्ते।
धर्मानुरागान्नयनिर्व्यपेक्षस्तपोवनाध्यासनयोग्य एषः।।[1]

नीति की उपेक्षा कर धर्म को प्रधानता देने पर नीति में दोष आ जाते है। नेताओं की दुर्नीति के दोष उनके आश्रितों, प्रजाओं में पनपने लगते हैं– नृपस्य वृत्त हि जनो ह्यनुवर्तते।[2] प्रजा राजा के आचरण का अनुसरण करती है। अतः प्रजा में दुर्नीति दोष क्षम्य हो सकते हैं किन्तु शासकों में नहीं क्योंकि इससे मूल का विनाश होता है–

फलन्ति कामं वसुधाधिपानां दुर्नीति दोषास्तदुपाश्रितेषु।
सह्यास्त एषां तु तथापि दृष्टा मूलोपरोधान्न तु पार्थिवानां।।[3]

असहाय का संरक्षण व सहायक – समाज व राष्ट्र के विकास में सहायक लोगों की सहायता करना भी शासक का धर्म है। जो शासक कृषकों पशुपालकों विभिन्न वस्तुओं की सद् तरीके से खरीदफरोख्त करने वाले व्यापरियों नागरिकों तथा कर दाताओं का पालन नहीं करता वह कोश सम्पत्ति से पृथ्वी की सम्पदा 'अनाज आदि से वंचित हो जाता हैं। प्रजा की भलाई के लिए किया गया परिश्रम कल्याणकारी तथा सुखप्रद होता है। अतः शासकों को इस प्रजाकल्याण की भावना की उपेक्षा करके कोई कार्य नहीं करना चाहिए।

इति प्रजा हितोद्योगः श्रेयः कीर्तिसुखावहः।
यन्नृपाणामतो नालं तमनादृत्य वर्तितुम्।।[4]

क्योंकि प्रजाहित ही शासक का सर्वप्रमुख कर्तव्य है। **प्रजाहितं कृत्यतमं महीपतेः।**[5] अतः शासक को प्रजाहित में अपने कोश सदा खुले रखने चाहिये निर्धनों

1. जातकमाला–हंसजातकम्–98
2. जातकमाला–विश्वन्तरजातकम्–19
3. जातकमाला–यज्ञजातकम्–34
4. जातकमाला–हंसजातकम्–98
5. जातकमाला–यज्ञजातकम्–7

Scanned by CamScanner

व असहायों की सहायता व उनके हितकारी नियमों के प्रति आदरभाव के साथ दीक्षित रहना चाहिए। **कामं सदा दीक्षित एव चत्वं दानप्रसङ्गान्नियमादराच्च।**[1]

समता और समरसतावादी दृष्टिकोण – निर्धनता दूर करने के लिए लोगों को आर्थिक मदद करना राष्ट्रहित का कर्त्तव्य है। इस बात को सम्राट अशोक भली-भाँति जानते व समझते थे। इसीलिए तो उन्होंने अपने शिलालेखों आदि के माध्यम से अपनी प्रजा में घोषणा करवायी थी कि –

एत तु महिडायो बहुकं च बहुविधं च छुदं च निरथं च मंगलं करोति (।) त कतव्यमेवतु मंगल (।) अफलं तु खो एतरिंस मंगलं (।) अयं तु महाफले मंगले च धंममंगले (।) ततेत दासभतकम्हि सम्यप्रतिपती गुरूनं, अपचिति साधु[2]

(अर्थात समाज में अनेक प्रकार के परम्परागत धार्मिक मंगलकारी कार्य सम्पन्न किये व करवाये जाते हैं। इन कार्यों से तो कम ही पुण्य फल मिलता है। मानव धर्म मंगल ही महामंगल फल दायक होता है और वह महामंगल मानव धर्म है- दीन-दुखियों, दासों भतकों(भृत्यों) के प्रति सम्मान जनक व्यवहार, श्रेष्ठजनों का आदर सत्कार करना।) इस प्रकार के व्यवहार से हमारे देश में सामाजिक व साम्प्रदायिक सहिष्णुता, एकता सुदृढ़ होती है।

सम्मानजनक व्यवहार –

यदीसितं यस्य सुखेन्धनं धनं प्रकाममाप्नोतु स तन्मदन्तिकात्।
इतीयमस्माद्विषयोपतापिनी दरिद्रता निर्विषया यथा भवेत्।[3]

जनहित में कार्य करने बाले लोगों व तपस्वियों के प्रति सम्मानजनक आचरण शासक के लिए हितकर होता है। **तपोधनेष्वभ्युदिता हि वृत्तयः क्षितीश्वराणां बहुमान पेशलाः।**[4]

स्वयं निरीक्षक–

अपि शुद्धतयोपथ्धास्वसक्तैरनुरक्तैर्निपुणक्रियैरमात्यैः।
समवेक्षयसे हितं प्रजानां न च तत्रासिपरोक्षंबुद्धिरेव।।[5]

1. जातकमाला-मैत्रीजातकम्-21
2. गिरनार सौराष्ट्र स्थित सम्राट अशोक का पालि भाषा,ब्राह्मी लिपि में लिखित शिलालेख
3. जातकमाला-यज्ञजातकम्-23
4. मृच्छकटिकम् अंक - 8 श्लोक 17 के वाद शकार का वचन पृ. 367
5. मृच्छकटिकम् अंक 8 श्लोक 20 पृष्ठ 371

Scanned by CamScanner

शासक का कर्त्तव्य है कि वह शुद्ध निश्छल, अनुरक्त और कार्यपटु मंत्रियों के द्वारा जनहित के कार्यों, प्रशासन व्यवस्था, सुरक्षा, स्वास्थ्य, शिक्षा व्यवस्था का समय-समय पर निरीक्षण करवाता रहे और स्वयं भी प्रत्यक्ष नजर बनाये रखे। अच्छे प्रशासकों का धर्म है कि अपने अधीनस्थों के और प्रजा के उत्तम, मध्यम और अधम कार्यों को नित्य परखता रहे। इससे जनहित के कार्य समय पर सम्पन्न तो होते ही है साथ ही नेता की बुद्धि का भी विकास होता है–

उत्तमाधममध्यानां कार्याणां नित्यदर्शनात्।
उपर्युपरि बुद्धीनां चरन्तीश्वरबुद्धयः।।[1]

प्रशासकों को अपनी नीतियों का सम्यक् निरीक्षण करते रहना चाहिए कि उसकी प्रशासन व्यवस्था से प्रजा प्रसन्न है कि नहीं। अच्छी नीतियों से यश बढ़ेगा। कीर्ति शत्रुओं को जलायेगी–

अपि धर्म सुखार्थ निविरोधस्तव चेष्टा नरवीर सज्जनैष्टाः।
वितता इव दिक्षु कीर्ति सिद्धया रिपुभिर्निश्वसितैरसत्क्रियन्ते।।[2]

दया-पराक्रम का विवेक – सुशासक को यथावसर दण्ड व दया दोनों का व्यवहार करना चाहिए। जैसा कि हंसजातकम् में ....हंसराज से कहता है कि-आप प्रजाओं के कार्य में निपुण हैं। अतः आप समयानुसार दया और दण्ड को सम्पादित कर अपनी कीर्ति, लोकप्रेम और लोक हित साधने में प्रगति तो करते हैं न–

अपि रक्षणदीक्षितः प्रजानां समयानुग्रहविग्रह प्रवृत्त्या।
अभिवर्धयसे स्वकीर्तिं शोभामनुरागं जगतो हितोदयं च।।[3]

नीति व पराक्रम से जीते गये दुष्टों की प्रार्थना पर दया तो दिखाये पर उन पर आवश्यकता से अधिक भरोसा न करें।

मैत्रीप्रियता– आदर्श शासक की वास्तविक शक्ति पड़ौसी देशों से मित्रता होती है, केवल उसकी अपनी सेना मात्र नहीं। मैत्री आदि धर्म ही उसके विचार-व्यवहार का नेतृत्व करते हैं। पड़ौसी देशों से मित्रता होने पर राष्ट्र समुचित सुरक्षित रहकर सर्वांगीण विकास के पथ पर अग्रसर रहता है।[4]

1. जातकमाला-हंसजातकम्-68
2. जातकमाला-यज्ञजातकम्-31
3. जातकमाला-हंसजातकम्-69
4. जातकमाला-मैत्रीबलजातकम्-14

Scanned by CamScanner

अधीनस्थों पर सम्यक् विश्वास – शासक का धर्म है कि वह उसके राष्ट्र में घटने बाली प्रत्येक घटना के प्रति प्रत्यक्षदर्शी रहे। अधीनस्थ अधिकारियों द्वारा बतायी बातों पर ही पूर्णतः निर्भर न रहें और जिसमें कभी कोई दोष नहीं देखा, समय-समय पर जिसने अपनी विश्वसनीय व पराक्रम (साहस) का परिचय दिया। जो अपने कार्यकौशल के लिए प्रसिद्ध हैं, ऐसे लोगों की उपेक्षा व अपमानित करने से बचना चाहिए। जो शासक ऐसा नहीं करता उसे अपूर्णनीय क्षति होती है–

अदृष्टदोषं युधि दृष्टविक्रमं तथा बलं यः प्रथितास्त्रकौशलम्।
विमानयेद् भूपतिरध्युपेक्षया ध्रुवं विरुद्धः स रण जयक्षिया।।[1]

कठोरता से नियम पालन :- कानून में कठोरता न हो तो कुछ लोग उपद्रव करते हैं, आतंक फैलाते हैं। राष्ट्र में शोषण, बलात्कार, अत्याचार, पापाचार फैलने से राष्ट्र का विकास अवरुद्ध हो जाता है। शासक का अपयश फैलता है अतः राष्ट्रहित में लिये गये निर्णयों का पालन जो लोग नहीं करते या शिथिलता दिखाते हैं ऐसे लोगों के प्रति त्वरित व कठोर सजा देना व प्रजा में कानून का भय बनाये रखना शासक का धर्म है। तभी प्रजा अनुशासित रहती है। शासक के कठोर आदेश के फलस्वरूप जनता में मृत्यु का भय, परलोक-चिन्ता, कुलाभिमान, यज्ञरक्षाविचार, विशुद्ध भावना और लज्जा उत्पन्न होती है। जनता शीलरूपी विमल आभूषण से सुशोभित होती है–

भयेन मृत्योः परलोकचिन्तया कुलाभिमानेन यशोऽनुरक्षया।
सुशुक्लभावाच्च विरूढया ह्लिया जनः स शीलामलभूषणोऽभवत्।।[2]

प्रशासक की शिथिलता, जांच निर्णय में शिथिलता अथवा विलम्ब नागालैंड दीमापुर में भीड़ की विचारशून्यता और बर्बता द्वारा बलात्कारी की हत्या जैसे दृश्य सामने आ सकते हैं। नेतृत्व कर्ता भीड़ से निर्माण अथवा विध्वंस में से कुछ भी करा सकता है।

आदर्श नीतिः- किसी भी राष्ट्र के समुचित विकास व सुरक्षा के लिए कोश का समृद्ध होना अति आवश्यक है। अतः कर नीति स्पष्ट व आय की पात्रतानुसार हो। निम्न स्तरीय किसान, मजदूर, उद्यमी, व्यापारी कर से मुक्त रखे जायें। सामान्य व्यक्ति के जीवन की मूलभूत आवश्यकता की वस्तुएँ करमुक्त रखी जायें। अधर्मपूर्वक कर

---

1. जातकमाला-हंसजातकम्-67
2. जातकमाला-यज्ञजातकम्-19

Scanned by CamScanner

वसूलना उसी प्रकार अनुचित व्यर्थ है जैसे वृक्ष से कच्चा फल तोड़ना। इस प्रकार कर वसूलने वाला शासक हानि और अपयश ही पाता है, लाभ नहीं।

द्रुमाद्यथामं प्रचिनोति यः फलं स हन्ति बीजं न रसं च विन्दति।
अधर्म्यमेवं बलिमुद्धरन्नृपः क्षिणोति देश न च तेन नन्दति।।[1]

अन्धविश्वास को दूर करना:- किसी भी बात को अपने तर्कों की ज्ञान कसौटी पर परखे बिना मान लेना व उस पर अमल करना अन्धविश्वास है। अन्धविश्वास लोगों को अकर्मण्य बनाता है। देश की सुरक्षा व विकास बाधित होते हैं। अतः प्रशासकों का दायित्व है कि वे स्वयं भी अन्धविश्वास से बचें और जनता में भी जागृति लाये। जैसे कि यज्ञजातक में बोधिसत्त्व ने धर्म के तत्त्वों के जानने वाले आदरणीय प्रमुख पुरोहितों, वृद्ध ब्राह्मणों और बुद्धिमान मंत्रियों से अनावृष्टि जन्य संकट से राष्ट्र की मुक्ति का मार्ग पूछा तो ब्राह्मणों ने वेदविहित यज्ञविधि ही एकमात्र उपाय बताया। इस यज्ञ विधि में सैकड़ों निर्दोष प्राणियों की बलि दी जाती थी। अतः यज्ञविधि बोधिसत्त्व को अच्छी नहीं लगी-

अथ ते वेद विहितमनेकप्राणिशतबधारम्भभीषणं यज्ञविधिं सुवृष्टि हेतुं मन्यमानास्तस्मै संवर्णयामासुः विदितवृत्तन्तस्तु स राजा यज्ञविहितानां प्राणिवैशसानां करुणात्मकत्वान्न तेषां तद्वचनं भावेनाभ्यनन्दत्।[2]

बोधिसत्व ने इसे अंधविश्वास मानते हुए तर्क दिया :-

य एव लोकेषु शरण्यसम्मतास्य एव हिंसामायि धर्मतो गताः।
विवर्तते कष्टमपायसङ्कटे जनस्तदादेशितका पथनुगः।।[3]

जो लोग संसार में दूसरों को शरण देने वाले के रूप में प्रतिष्ठित हैं, वे ही धर्म के नाम पर हिंसा का मार्ग अपनाते हैं ऐसे लोगों के आदेश का पालन करके लोग कुमार्ग पर चलते हैं। निश्चय ही अनिष्टकारक संकट में पड़कर कष्ट उठाते हैं। क्योंकि:-

को हि नामाभिसम्बन्धो धर्मस्य पशुहिंसया।
सुरलोकार्धवासस्य दैवतप्रीणनस्य वा।।[4]

---

1. जातकमाला-महाबोधिजातकम्-70
2. जातकमाला-यज्ञजातकम्
3. जातकमाला-यज्ञजातकम्-9
4. जातकमाला-यज्ञजातकम्-10

Scanned by CamScanner

धर्म का, स्वर्गप्राप्ति का, देवताओं की प्रसन्नता का पशुहिंसा से भला क्या सम्बन्ध हो सकता है?

प्रजा के सुखदुखः के प्रति सम्वेदनशीलताः– अच्छे प्रशासकों का दायित्व है कि वह समय-समय पर अपने राष्ट्रान्तर्गत आने वाले क्षेत्रों का भ्रमण करे और प्रजा के सुख-दुख को जाने, उसे अनुभव करें और उनके प्रति अपनी सम्वेदना व्यक्त करे। प्रशासकों को राज के साथ-साथ शास्त्र पर भी ध्यान देना चाहिए। जैसा कि-मैत्रीबल जातक में बोधिसत्त्व मैत्रीबल नामक राजा हुए, वह प्रजा के प्रति इतने संवेदनशील थे कि-

दुःखं सुखं वा यदभूत्प्रजानां तस्यापि यज्ञस्तदभूत्तथैव।
अतः प्रजारक्षणदक्षिणोऽसौ शस्त्रं च शास्त्रं च परामर्श।।[1]

जो सुख दुःख प्रजा को होता था, वह वैसा ही उनको अनुभव होता था। इसलिए प्रजा की रक्षा में कुशल (समर्थ) उस राजा ने शस्त्र और शास्त्र दोनों पर विचार किया।

जो प्रशासक सम्यक् राजधर्म का सम्यक् तरीके से पालन करता है। उस राष्ट्र में समस्त प्रजा सत्कर्मो में प्रवृत्त रहती है। उपद्रव क्षीण होकर विलुप्त हो जाता है। सत्य, पुण्य बड़ता है। लोग पर्यावरण का ह्रास नहीं करते, ऋतुएँ समुचित स्त्रवित एवं सदा सुखकर होती हैं। पृथ्वी नाना प्रकार के उत्कृष्ट, स्वच्छ व पौष्टिक धान्य (अन्नों) से परिपूर्ण हो जाती है। समस्त जलस्त्रोत स्वच्छ जलवाले बने रहते हैं। समस्त वनस्पतियाँ औषधीय गुणों से युक्त होती हैं। मौसम के अनुसार बहती हवा सदा सुखकर होती है। समस्त राष्ट्र असाध्य रोगों से मुक्त हो जाता है। लोग निरोगी होकर स्वच्छ जीवन जीते हैं। आपसी शत्रुता समाप्त हो जाती है। प्रजा कार्यकुशल हो जाती है अतः दुर्भाग्य का भय नहीं रहता क्योंकि दुर्भाग्य तो अकर्मण्यता से आता है। दूसरे राष्ट्र का भय नहीं होता। चारों ओर सुख शान्ति होने से कृतयुग की अनुभूति होती रहती है। सुशासक को परमपद निर्वाण की प्राप्ति होती है। यही सद्साहित्य का अमर उपदेश है।

1. जातकमाला-मैत्रीबलजातकम्-1

Scanned by CamScanner

विषयानुक्रमणिका

प्रास्ताविकं किञ्चित्–प्रो० श्रीकृष्ण शर्मा xi

सम्पादकीय–डॉ० बाबूलाल मीना xv

प्रथम अध्याय : वेद विषयक चिन्तन

1.1 सामाजिक मूल्यों की प्रस्थापना का वैदिक उपक्रम
डॉ० कमलेशकुमार छ. चोकसी 1

1.2 गायत्री का वैज्ञानिक स्वरूप
डॉ० सत्य प्रकाश दुबे 17

1.3 वैदिक राष्ट्र की परिकल्पना
डॉ० यादराम मीना 27

1.4 नारी चेतना विषयक वैदिक दृष्टि
डॉ० योगेन्द्र कुमार भानु 38

1.5 ब्रह्मा दुहितृ समागम नामक आख्यान का दार्शनिक विवेचन
डॉ० सरस्वती 45

1.6 वैदिक वाङ्मय में पर्यावरण एवं कृषि विज्ञान
डॉ० राकेश कुमार 52

1.7 वेद विज्ञान में पर्यावरणीय वायुतत्त्व की समालोचना
डॉ० सीमा चौधरी 65

1.8 वेदों में पर्यावरण समालोचन
डॉ० सरोज 71

1.9 वैदिक धर्म के स्वरूप निर्धारण में 'ऋत' सिद्धान्त की भूमिका
डॉ० प्रमोद कुमार पाण्डेय 82

Scanned by CamScanner

1.10 योगोपनिषदों में योगतत्त्व चिंतन
डॉ० कलापिनी हरेकृष्ण अगस्ति 88

1.11 शिक्षाग्रन्थेषु भाषाशास्त्रीयविचाराः
डॉ० हरेकृष्णः अगस्तिः 97

1.12 भाषा शिक्षण में शिक्षा वेदाङ्ग की उपादेयता
डॉ० भूपेन्द्र कुमार राठौर 103

द्वितीय अध्याय : आर्षकाव्य एवं पुराण विषयक चिन्तन

2.1 वाल्मीकि रामायण में पर्यावरण
क्षमा 117

2.2 श्रीमद्भगवद्गीता के जीवन दर्शन का भारत के नव-निर्माण में योगदान
आचार्य (डॉ०) शीलक राम 124

2.3 तनावपूर्ण जीवन में श्रीमद्भगवद्गीता की प्रासंगिकता
डॉ० रामहेत गौतम 156

2.4 श्रीमद्भागवत के संवादों में वर्णित भक्ति का माहात्म्य
डॉ० आशा सिंह रावत, डॉ० कल्याण सिंह रावत 163

2.5 अग्निपुराण में राजधर्म की प्रासंगिकता
डॉ० संजय कुमार 174

2.6 श्रीमद्भागवत के उपदेशों में वर्णित भक्ति की महिमा
डॉ० आशा सिंह रावत 184

2.7 प्रमुख पुराणों में पर्यावरण चिन्तन
प्रो० रामेश्वर प्रसाद गुप्त 192

तृतीय अध्याय : नाट्य विषयक चिन्तन

3.1 संस्कृत नाट्य की अद्यतन प्रवृत्तियाँ
डॉ० मीरा द्विवेदी 203

3.2 संगीतकलामर्मज्ञः कविकुलगुरुः कालिदासः
डॉ० सुकदेव वाजपेयी 219

3.3 उत्तररामचरितम् में योषिदलङ्कार
डॉ० नौनिहाल गौतम 225

Scanned by CamScanner

3.4 मुरारि के अनर्घराघवम् नाटक में अद्भुत रस विवेचन
डॉ० आशा सिंह रावत, अशोक कुमार मीना 233

चतुर्थ अध्याय : महाकाव्य विषयक चिन्तन

4.1 संस्कृत साहित्य में काव्य एवं महाकाव्य का लक्षण
डॉ० जी. एल. पाटीदार 240

4.2 रघुवंशे अर्थान्तरन्यासवैभवम्
Dr. Sayanto Mahato 247

पञ्चम अध्याय : व्याकरण विषयक चिन्तन

5.1 व्याकरणादलंकार प्रवर्तते
डॉ० किरण आर्या 257

5.2 चत्वारि वाक् परिमिता पदानि
डॉ० मनमोहन सैन 262

5.3 मधुसूदन ओझा की दृष्टि में अयोगवाह विचार : एक समीक्षा
डॉ० समय सिंह मीना, श्रीमती प्रेमलता मीणा 267

षष्ठ अध्याय : नाट्यशास्त्र एवं काव्यशास्त्र विषयक चिन्तन

6.1 नाट्यशास्त्र में प्रतिबिम्बित सामाजिक सन्देश
डॉ० टेकचन्द मीणा 284

6.2 संस्कृत काव्यशास्त्र में काव्यशरीर सम्बन्धी नवीन अभिवृत्तियाँ
डॉ० अनीता 288

6.3 संस्कृत काव्यशास्त्र में भाव की अवधारणा
डॉ० घनश्याम बैरवा 303

6.4 संस्कृत साहित्य में आदर्श नेता के गुण
डॉ० रामहेत गौतम 308

6.5 पाश्चात्य सन्दर्भों में सौन्दर्यशास्त्र का स्वरूप
पूनम रानी 319

सप्तम अध्याय : विविध विषयक चिन्तन

7.1 संस्कृत पत्रिकायें एवं बाल काव्य रचनायें
डॉ० लाला शंकर गयावाल 329

Scanned by CamScanner

संस्कृत वाङ्मय चिन्तन

सम्पादक

डॉ० बाबूलाल मीना

एम०ए० संस्कृत लब्धस्वर्णपदक, पीएच०डी०, साहित्याचार्य
एसोसिएट प्रोफेसर
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग
महारानी श्री जया राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
भरतपुर (राज०)

BOOK EASTERN EBL LINKERS

ईस्टर्न बुक लिंकर्स
दिल्ली : : (भारत)

Scanned by CamScanner

इस पुस्तक में व्यक्त विचार लेखकों के व्यक्तिगत हैं। इनसे किसी भी प्रकार की होने वाली हानि के लिए सम्पादक और प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है। सम्पादक और प्रकाशक की अनुमति के बिना इस पुस्तक के किसी अंश को संक्षिप्त और परिवर्धित कर प्रकाशित करना या फिल्म आदि बनाना कानूनी अपराध है। किसी भी विवादास्पद स्थिति में न्यायालय क्षेत्र दिल्ली होगा।

प्रकाशक :

ईस्टर्न बुक लिंकर्स

हैड ऑफिस: 5825, न्यू चन्द्रावल,
जवाहरनगर, दिल्ली-110007
फोन : 23850287, 9811232913

शोरूम: 4806/24, भरत राम रोड,
दरिया गंज, नई दिल्ली-110002
फोन : 23285413

e-mail : eblindology@gmail.com
ebl.info76@gmail.com
Website : www.eblindology.com

© सम्पादक

प्रथम संस्करण : 2019

[redacted]

ISBN : 978-93-89386-04-2

Sanskrit Vāṅmaya Chintan

Dr. Babulal Meena

टाईप सैटिंग : **क्रियेटिव ग्राफिक्स**
मुद्रक : **आर. के. प्रिंट सर्विस**, दिल्ली

Scanned by CamScanner